International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(1): 30-33

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(1): 30-33
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 10-11-2017
Accepted: 11-12-2017

डॉ0 अरविन्द कुमार सिंह
संस्कृत–विभाग, सहा0 आचार्य,
साकेत गर्ल्स डिग्री कालेज,
महाविद्यालय, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश,
भारत

Correspondence
डॉ0 अरविन्द कुमार सिंह
संस्कृत–विभाग, सहा0 आचार्य,
साकेत गर्ल्स डिग्री कालेज,
महाविद्यालय, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश,
भारत

श्री अरविन्द के आलोक में काव्यात्मा और आध्यात्मिक कविता का स्वरूप

डॉ0 अरविन्द कुमार सिंह

सारांश
श्री अरविन्द का काव्यात्म–विमर्श आध्यात्मिक दृष्टि से ग्रहण करने योग्य है। आध्यात्मिक दृष्टि का प्रतिपादन साहित्य में केवल श्रीअरविन्द ने ही नहीं किया है बल्कि इनके अतिरिक्त भी अनेक साहित्यिक मनीषियों ने इस तत्त्व की प्रतिष्ठा साहित्य के माध्यम से की है। मध्य युग का सम्पूर्ण भक्ति साहित्य आध्यात्मिकता से ओत–प्रोत है। यद्यपि वहाँ यह आध्यात्मिकता धार्मिक कलेवर के साथ अभिव्यक्त हुई है, किन्तु जयदेव, सूरदास और आधुनिक युग के महान कवि रविन्द्रनाथ टैगोर के साहित्य में इसे अपने शुद्ध दार्शनिक और आध्यात्मिक रूप में देखा जा सकता है। श्री अरविन्द स्वयं कवि, योगी और दार्शनिक होने के कारण काव्य की उच्चस्तरीय प्रतिभा से सम्पन्न थे। जिसका वह आध्यात्मिक और रहस्यवादी काव्य के रूप में प्रतिपादन करते हैं। काव्य की आत्मा के रूप में इसी विमर्श को श्री अरविन्द की दृष्टि से प्रस्तुत लेख में विवेचित करने का प्रयास किया गया है।

कूट शब्दः काव्यात्मा, आध्यात्मिक कविता, आध्यात्मिक दृष्टि

प्रस्तावना
काव्यशास्त्रीयों में काव्य की आत्मा को लेकर अलग–अलग मत है। इसका मुख्य कारण सम्भवतः उनकी अपनी–अपनी रूचि की प्रधानता है। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि उनकी रूचि या मत के पीछे सत्य का अंश नहीं है। उनके अनुसार काव्य की आत्मा ही काव्य का वास्तविक सौन्दर्य है।
आधुनिक युग के कवि, दार्शनिक और योगी श्रीअरविन्द का संस्कृत काव्य और काव्यशास्त्रीयों के मूल्यांकन में अप्रतिम योगदान है। अतः इस लेख में उनके विचारों के प्रकाश में काव्य की आत्मा के रूप में आध्यात्मिक कविता के स्वरूप का विवेचनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया जायेगा।

विभिन्न काव्यशास्त्रीयों के अनुसार काव्य की आत्मा

संस्कृत के विशाल वांग्मय में भरतमुनि से लेकर पण्डितराज जगन्नाथ के समय तक लगभग दो हजार वर्षो की कालावधि में विद्यमान आचार्यों के चिन्तन से काव्य के आत्म–तत्त्व की बहुविध प्रकार से प्रतिष्ठा हुई है। आगे चलकर अट्ठारहवीं शताब्दी के विश्वेश्वर पण्डित से लेकर आधुनिक काल के अनेक आचार्यों ने भी अपने–अपने अनुसार काव्यात्म–विमर्श प्रस्तुत किया है। कुछ प्रमुख उद्धरणों को लेते हुए हम पुराकाल में प्रतिष्ठित काव्यात्म–विमर्श पर एक विहंगम दृष्टि डालेंगे और आधुनिक युग के मनीषि श्रीअरविन्द के चिन्तन के प्रकाश में काव्यात्मा के आदर्श, लक्ष्य और स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।
हमारे प्राचीन काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में काव्यशास्त्रीय संप्रदायों, काव्य के लक्षणों, काव्य में अलंकारो और काव्यशास्त्र में रसों की अवधारणा पर विस्तार से प्रकाश डाला है। इनमें भरतमुनि, भोजराज, भट्टनायक, विश्वनाथ, राजशेखर, केशव मिश्र आदि काव्यशास्त्र के रस सम्प्रदाय के प्रवर्तक और प्रमुख आचार्य हैं; भामह, दण्डि, उद्भट्ट, रूद्रट, जयदेव आदि अलंकार सम्प्रदाय के प्रवर्तक और प्रमुख आचार्य हैं; वामन रीति सम्प्रदाय के प्रवर्तक है; आनन्दवर्धन, मम्मट, अभिनवगुप्त, जगन्नाथ ध्वनि सम्प्रदाय के प्रवर्तक और प्रमुख आचार्य हैं; कुन्तक वक्रोक्ति सम्प्रदाय के समर्थक हैं; क्षेमेन्द्र औचित्य सम्प्रदाय के समर्थक हैं। इस प्रकार काव्यशास्त्र के सम्प्रदायों की दृष्टि से काव्य की आत्मा इन सम्प्रदायों के माध्यम से स्पष्ट और अभिव्यक्त हुई है। भरतमुनि का रस सम्प्रदाय विभाव, अनुभाव और व्यभिचारीभाव के संयोग से रस की निष्पत्ति मानता है –

''विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः''।

भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र' रस को काव्य की आत्मा मानता है। भामह शब्द और अर्थ की युति को काव्य की आत्मा मानते हैं –

''शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्''।

वामन ने रीति सम्प्रदाय के अन्तर्गत रीति को काव्य की आत्मा कहा है –

''रीतिरात्माकाव्यस्य''

ध्वनि सिद्धान्त के प्रवर्तक आनन्दवर्धन ने ध्वनि को काव्य की आत्मा माना है –

''ध्वनिरात्मा काव्यस्य''।

वक्रोक्ति सम्प्रदाय के प्रवर्तक कुन्तक के अनुसार वक्रोक्ति काव्य की आत्मा है –

''वक्रोक्ति काव्य जीवितम्''।

औचित्य सम्प्रदाय में आचार्य क्षेमेन्द्र ने औचित्य को काव्य की आत्मा कहा है –

''औचित्यं रससिद्धस्य स्थिरं काव्यस्य जीवितम्''।

इस प्रकार विभिन्न काव्यशास्त्री विभिन्न लक्षणों के आधार पर काव्य की आत्मा का निर्धारण करते हैं। इस प्रकार लिखा गया साहित्य अत्यन्त विशाल है। जिसके ऊपर तत्कालीन और परवर्ती काव्यशास्त्रीयों ने अपनी–अपनी दृष्टियों से काव्यात्मक आलोचनायें की हैं। किन्तु यहाँ एक तथ्य स्पष्ट है कि कोई आचार्य रस को, कोई अलंकार को, कोई रीति को, कोई ध्वनि को, कोई वक्रोक्ति और कोई औचित्य को काव्य का प्रमुख या मूल तत्त्व मानता है। अतः हम इन्ही के अनुसार काव्य की आत्मा का निर्धारण करते हैं।
श्रीअरविन्द ने एक बिल्कुल ही भिन्न धरातल पर काव्य के आदर्श को प्रतिष्ठित किया है। यदि इसकी ध्वनि वैदिक साहित्य में विद्यमान है, तो श्रीअरविन्द की लेखनी में भी इसी ध्वनि का पुनश्चरण नये अर्थ, नये सन्दर्भ और नये रूपों में तथा बौद्धिक रूप से युक्ति–युक्त ढ़ंग से किया गया है।

श्रीअरविन्द का काव्य–क्षितिज

भारतीय परम्परा से इतर पाश्चात्य काव्य परम्परा में अध्यात्मपरक उद्भावना को काव्य–समीक्षकों ने स्वतन्त्र श्रेणी में रखकर विचार किया है। मेटाफिजिकल, पोइट्री की वहाँ अलग परम्परा है। किन्तु भारतीय चिन्तन में ऐसा वर्ग–भेद नहीं है। यहाँ के श्रेष्ठ काव्य में, यहाँ तक कि शुद्ध श्रृंगार काव्य में भी एक दिव्य ध्वनि सर्वत्र दिखायी पड़ती है। भारतीय मन और प्रतिभा की कदाचित् यही स्वकीय पहचान है कि स्नायविक सीमा को उत्तीर्ण कर जो कविता दिव्य संस्पर्श नहीं रच पाती, उसे भारतीय प्रज्ञा बहुमान नहीं देती। श्रृंगार, संवेदना के अद्वितीय कवि कालिदास और विद्यापति विश्व–काव्य परिदृश्य में भी ऊँचे दिखायी पड़ते हैं, क्योंकि उनकी प्रतिभा अपरा की रूप–राशि को बड़ी सहजता से परालोक की दिव्य चेतना से सम्पन्न करती है किन्तु यहाँ यह नहीं समझना चाहिए कि दिव्य लोक से जुड़ने का तात्पर्य दृश्यमान जगत का निषेध है। जयदेव और सूरदास जैसे भक्त कवि लौकिक सौन्दर्य के अप्रतिम कवि हैं। आधुनिक युग के रविन्द्रनाथ टैगोर और जयशंकर प्रसाद की महत्ता इसी बिन्दु पर खड़ी है। इसी पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करते हुए श्रीअरविन्द की वैदिक दृष्टि में कविता और काव्य चिन्तन के अन्दर अतिमानस की दिव्य चेतना का आग्रह दिखायी देता है।

श्रीअरविन्द विश्व–काव्य क्षितिज पर सूर्य के समान प्रकाशित हैं। उन्होंने अपना काव्य–सम्भार अंग्रेजी, बंगला और संस्कृत में तो रचा ही है, किन्तु काव्य समालोचक तथा विश्लेषक के नाते उन्होंने भावी कविता का आध्यात्मिक उदात्तीकरण भी अपने समालोचना 'भावी कविता' में रेखांकित किया है। कवि और समालोचक का यह मणि–कांचन संयोग विश्व साहित्य में विरल है।
संस्कृत के पिंगलशास्त्र के वेत्ता होने के साथ–साथ वे ग्रीक परम्परा के छन्दशास्त्र से पूर्ण परिचित थे। अतः जहाँ उन्होंने गायत्री छन्द में श्रीअरविन्द गायत्री का मंत्र दर्शन किया, वहीं उन्होंने ग्रीक परम्परा के छन्दों में भी प्रयोग किये। आज उनका काव्य साहित्य बहुविध छन्द विधाओं में उपलब्ध है।
श्रीअरविन्द का काव्य उपादान संस्कृत साहित्य की कथायें और भारतीय इतिहास की घटनायें हैं। यूरोपीय कथाओं को भी उन्होंने काव्य का आधार बनाया है तथा अरबी कहानियों का आधार भी उनके साहित्य में मिलता है। इस व्यापकता के साथ–साथ उन्होंने अपने आत्मीयों और मित्रों पर भी संवेदनपूर्ण कवितायें लिखी हैं। अतः उनका काव्य बहुधरातलीय है। श्रीअरविन्द वैदिक परम्परा के ऋषि प्रकृति के कवि हैं। उन्होंने जिस किसी भी विषय का स्पर्श किया है, उसका आध्यात्मिक उदात्तीकरण और रूपान्तरण कर दिया है।[1]
श्रीअरविन्द के अनुसार कवि के लिए सौन्दर्य और आनन्द का चन्द्रमा सत्य के सूर्य या जीवन के प्रश्वास से भी बड़ा देवता है। काव्यात्मक आनन्द सौन्दर्य की गहन आत्मा तथा अन्तरंग अनुभूति है। वे भविष्य की कविता को मन्त्र–द्रष्टा की सम्बोधि या समाधि में अनुभूत चेतना की वाहिका के रूप में स्वीकार करते हैं। भविष्य का कवि–धर्म आध्यात्मिक काव्य प्रेरणा पर ही आधारित होकर अपनी संसिद्धि को प्राप्त करेगा। यह काव्य दृष्टि उनकी स्वयं की कविताओं में प्रस्फुटित हुई है। इसे ही 'मन्त्रकाव्य' कहते हैं। यह मन्त्र–शक्ति गहन आध्यात्मिक यथार्थ की काव्यात्मक अभिव्यंजना है। जो छन्द, शब्द और कथ्य को आत्मा की सत्यदृष्टि से सम्पृक्त कर देती है।[2]

श्रीअरविन्द के अनुसार काव्य की आत्मा

ठसके पूर्व दिये गये श्रीअरविन्द के काव्य–क्षितिज से प्रायः यह स्पष्ट हो गया है कि उनके अनुसार काव्यात्मा का स्वरूप क्या होगा? तथापि श्रीअरविन्द की दृष्टि में काव्यात्मा के स्वरूप को और विस्तार के साथ स्पष्ट करने के लिए हमें कुछ बिन्दुओं पर विचार करते हुए आगे बढ़ना होगा। इस सन्दर्भ में हम सच्ची कविता, आध्यात्मिक कविता, काव्य में शाश्वत और सामायिक तत्त्व, भावी कविता, सावित्री तथा रस के उच्चतर स्वरूप पर श्रीअरविन्द के अनुसार प्रकाश डालने का प्रयास करेंगे; जिससे श्रीअरविन्द के आलोक में काव्यात्मा और आध्यात्मिक कविता के स्वरूप को स्पष्ट किया जा सके।
कवि के विषय में श्रीअरविन्द कहते हैं कि हमारे पुरखे इस बात को जानते थे कि कवि केवल भावुकता भरी तुकबन्दी करने वाला चारण नहीं होता, वह ऊपरी मन की दृष्टि से परे देखता है और अन्तः प्रकाश से देने वाले शब्द को पाता है और हमें भी बहुत कुछ दिखा देता है। काव्य शैली का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है उस शब्द को पाना। पुनः एक अन्य स्थान पर वह कहते हैं कि कवि की विशेष क्षमता है 'अन्तर्दर्शन' जैसे विवेकमय विचार दार्शनिक की और विश्लेषणात्मक अवलोकन वैज्ञानिक की विशेष क्षमता है। पूर्वजों की दृष्टि में कवि सत्य को देखने और दिखाने वाला होता था। बड़े कवि प्रकृति जीवन और मनुष्य असामान्य गहराई में देख सकते थे और उसे शब्दों का परिधान दे सकते थे।[3]
ऐसे कवि द्रष्टा के समक्ष श्रीअरविन्द जब सच्ची कविता की प्रस्तावना स्पष्ट करते हैं, तो वह अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। उनके अनुसार सच्ची कविता सदैव सृजनात्मक प्राण में से होती हुई किसी न किसी सूक्ष्म जगत से आती है और हमारे बाहरी मन,

बुद्धि का उपयोग केवल ऐसे यन्त्र के रूप में करती है जो उसे एक स्थान से दूसरे पर ले जाता है। अच्छी कविता के लिए तीन बातें आवश्यक हैं –

पद्ध प्रेरणा का मूल स्रोत;

पपद्ध सौन्दर्य को रूप देने वाली प्राण–शक्ति – यही शक्ति प्रायः कविता के शरीर को गढ़ती है, उसके छन्द, लय आदि का निश्चय करती है, लेकिन कभी–कभी कविता का रूप भी प्रेरणा–स्रोत से भी आता है;

पपपद्ध कवि की बाह्य चेतना जो कविता से उसके मूल से लेकर बाह्य रूप में प्रकट करती है।

सबसे अच्छी और सम्पूर्ण कविता तब लिखी जाती है जब उसका मूल स्रोत अपनी प्रेरणा को शुद्ध रूप में, बिना किसी क्षति के प्राण तक पहुँचा सके, वहाँ जाकर प्रेरणा अपने अनुकूल शब्द–परिधान पा ले और उचित छन्द में बैठकर नीरव, निश्चेष्ट बाह्य चेतना में पहुँच जाए; बाह्य चेतना उसमें जरा भी हेर–फेर किये बिना उच्चतर आन्तरिक क्षेत्रों से आने वाले इस देवों के उपहार को जैसा का तैसा प्रस्तुत कर दें।

मूल स्रोत कभी भी हो सकता है। कविता सूक्ष्म भौतिक से आ सकती है, उच्चतर या निम्नतर प्राण से आ सकती है, सक्रिय सृजनात्मक बुद्धि या गतिशील अन्तदर्शन, चैत्य पुरुष, प्रकाशित मन, अन्तर्भास से आ सकती है और कभी–कदास अधिमानस विस्तार से भी आ जाती है। अधिमानस से प्रेरित कविता इतनी मम है कि सम्भवतः सारे संसार के साहित्य में कुछ ही पंक्तियाँ, कुछ ही पद इससे प्रभावित होने का आभास देते हैं।[4]

भारत की उर्वर रचनात्मकता में वस्तुतः आध्यात्मिकता भारतीय मन की सर्वकुंजी है। जिसे स्वायत्र कर कोई भी आध्यात्मिक काव्य लिख सकता है। श्रीअरविन्द ने आध्यात्मिक कविता की दृष्टि से इस सम्बन्ध में जो भी विचार किया है, उससे उनकी काव्य रचना का स्वरूप और स्पष्ट होता है। आध्यात्मिक दृष्टि कभी बौद्धिक, दार्शनिक अथवा अमूर्त नहीं होती। वह सदैव सुस्पष्ट, जीवन्त तथा मूर्त के तात्पर्य को सम्मुख रखने वाली होती है। आध्यात्मिक कवि की रचना में आन्तर्दृष्टि और अनुभूति वास्तविक मूर्त रूप में अभिव्यक्ति होती है तथा दार्शनिक कवि विचारों को सजा–संवारकर व्यक्त करता है।[5] इस प्रकार आध्यात्मिक कविता का रूपायन चेतना के उच्चतर स्तरों से होते हुए कवि की अनुभूतियों को उसकी आत्म–अनुभूति और आत्म–अभिव्यक्ति के द्वारा प्रकट करता है।

श्रीअरविन्द ने काव्य में शाश्वत और सामायिक दोनों तत्त्वों को स्वीकार किया है। वह रचना में शाश्वत तत्त्व की अभिव्यक्ति को प्रधान मानते हैं किन्तु युगीन या सामायिक तत्त्व की उन्होंने अवहेलना नहीं की है, क्योंकि वह मानते हैं कि समय का प्रभाव परोक्ष अथवा प्रत्यक्ष रूप से रचना में आता ही है। किन्तु उन्होंने यह अवश्य माना है कि काव्य में शाश्वत तत्त्व प्रधान और सामायिक तत्त्व गौण होता है। काव्य के पूर्ण बनने और उसे पूर्ण बनाने की चेष्टा के अतिरिक्त और सब गौण है। काव्य में शाश्वत तत्त्व रखने की चेष्टा ही प्रधान है; उसे पूर्ण बनाने की चेष्टा ही अनिवार्य है। काव्य के क्षेत्र में इस अनिवार्य चेष्टा को सफल बनाने के लिए जो अन्य तत्त्व, सामायिक तत्त्व ग्रहण करने पड़ते हैं वे अप्रधान या गौण हैं।[6]

श्रीअरविन्द ने 'द फ्यूचर पोइट्री' के नाम से अपने ग्रंथ में कविता के स्वरूप के विषय में विस्तृत दृष्टि से विचार किया है। उन्होंने अतीत और वर्तनान की मावन विचारधारा, उसके मन के भौतिक, आध्यात्मिक स्वरूप, अतीत एवं वर्तमान में मानव द्वारा रचित काव्य के विषय और विषयाभिव्यक्ति के रूप–रंग आदि नाना तत्त्वों पर दृष्टि रखते हुए मनन–विवेचन के पश्चात भावी काव्य की रूपरेखा की कल्पना प्रस्तुत की है। उनके अनुसार आधुनिक काल का बुद्धिवाद जिसका प्रभाव आज वर्तमान में भी कम नहीं है, भविष्यत काव्य के लिए कई विकल्प उपस्थित कर सकता है। श्रीअरविन्द कहते हैं कि बुद्धिवाद भविष्यत काव्य के लिए तीन पद्धतियों मे से किसी एक का चुनाव कर सकता है जो आने वाले समय में ग्राह्य हो सकती है –

पद्ध आधुनिक या वर्तमान युग में बुद्धिवाद के फलस्वरूप काव्य की भाषा ने जो स्वरूप ग्रहण कर लिया है, काव्य के रूपों जो शैली अपना ली है, भविष्यत काव्य उन्हीं को ग्रहण कर अग्रसर हो सकता है। इसको जिन भावों–विचारों, वस्तुओं को अभिव्यक्त करना है उनके मूल्य, उनके महत्त्व पर इसका विश्वास बना रह सकता है। बुद्धिवाद की अवलोकन या दृष्टि–शक्ति में प्रेरित करने की जो क्षमता है वह (क्षमता) उक्त भाषा और रूप के सहारे अन्य अन्तर्भाव को प्रेरित कर सकती है।[7]

पपद्ध भविष्यत काल के लिए श्रीअरविन्द जब दूसरे विकल्प की बात करते हैं तब उनकी दृष्टि विशेषतः काव्य के बाह्य आकार–प्रकार पर रहती है। प्रथम विकल्प में काव्यभाषा और काव्यरूप का प्रसंग आया है। आवश्यकता अथवा माँग के अनुसार भविष्यत काव्य पहले की भाषा और पहले के रूप को मूर्ति (इमेज़), साँचे (मोल्ड), अभिव्यक्ति द्वारा नया स्वरूप दे सकता है। इससे ये दोनों अधिकतम उत्कर्ष को प्राप्त हो सकते हैं। इस परिवर्तन और उत्कर्ष के कारण इनमें (मूर्ति, साँचा, अभिव्यक्ति) अन्तरावगाही शक्ति (इन्टेन्सिव फोर्स) की प्रतिष्ठा होगी अर्थात भावी काव्य पूर्वग्रहित या प्रचलित काव्य भाषा तथा काव्य रूप में परिवर्तन कर उन्हें अधिक शक्तिशाली बना सकता है।[8]

पपपद्ध भविष्यत काव्य के लिए तृतीय विकल्प की विवेचना करते हुए श्री अरविन्द ने उसके बाह्य रूप एवं विषयवस्तु की भी चर्चा की है। यह किसी नये और सीधे सुर (टोन) की खोज का प्रयत्न कर सकता है। यह प्रातिभ भाषा और ध्वनि की किसी विशुद्ध, निरपेक्ष माँग, आवश्यकता की पूर्ति के लिए कुछ समुचित मार्ग पाने का प्रयास कर सकता है। तृतीय विकल्प के प्रसंग में श्रीअरविन्द ने काव्य की उस विषयवस्तु की ओर स्पष्ट संकेत किया है जो विषयवस्तु आत्मिक या आध्यात्मिक काव्य की है और इसकी अभिव्यक्ति के लिए काव्य भाषा, काव्य रूप, काव्य साँचा पहले से परिवर्तित अथवा सर्वांशतः नवीन होगें।[9]

श्रीअरविन्द भावी काव्य के प्रति आशान्वित हैं। उनके अनुसार इन पद्धतियों में से किसी एक के द्वारा भविष्यत काव्य अपने लक्ष्य तक पहुँचकर अनुभूति एवं अभिव्यक्ति के महत्तर राज्य की सीमा में प्रवेश कर सकता है।[10]

काव्यात्मा के स्वरूप की अभिव्यक्ति के लिए श्रीअरविन्द के महान तत्त्वशास्त्रीय काव्यग्रन्थ 'सावित्री' का उल्लेख इस दृष्टि से आवश्यक है कि वह क्रान्तद्रष्टा श्रीअरविन्द की काव्यात्मा का उच्चातिउच्च उद्घोश है। सावित्री पौराणिक गाथा का प्रतीक सत्य है। यह वैदिक युग की बहुत सी प्रतिकात्मक कथाओं में से एक है। यह मानव जाति का विधान अथवा काव्य में अभिव्यक्त दिव्य जीवन की प्रस्तुति है। सावित्री के विषय में कहा जाता है कि यह एक अन्तः प्रकाश है, यह अनन्त की, शाश्वत की खोज है। सच तो यह है कि पूरी की पूरी सावित्री उच्चतम क्षेत्र से सामूहिक रूप से उतरी है और श्रीअरविन्द की प्रतिभा ने उसे श्रेष्ठ, भव्य– शैली में पंक्तिबद्ध किया है। इसमें रहस्यवाद, गुह्यवाद, दर्शन, क्रम–विकास का इतिहास, मनुष्य, देव, सृष्टि, प्रकृति का इतिहास निहित है। श्रीअरविन्द ने महाकाव्य 'सावित्री' के रूप में काव्यात्मा की अभिव्यक्ति का जो आदर्श प्रस्तुत किया है उसके लिए उच्चतर ज्ञान, चेतना के लोकों की अनुभूति, अतिमानस की अनुभूति यहाँ तक की मृत्यु पर विजय की भी अनुभूति अपेक्षित हैं। अतः इसे हम काव्यात्मा की श्रेष्ठतम और उच्चतम अभिव्यक्ति के रूप में ग्रहण कर सकते हैं।[11]

भारतीय साहित्य में काव्यात्मा का उत्कर्ष रस, सौन्दर्य अथवा आनन्द के रूप में हुआ है। इस दृष्टि को न केवल वेद–उपनिषद बल्कि श्रीअरविन्द ने भी अपनी दृष्टि से स्वीकार किया है। तैत्तिरीयोपनिषद् ने परम तत्त्व को रस स्वरूप कहा है। उस रस के द्वारा ही आनन्द की प्राप्ति होती है।[12]

श्रीअरविन्द ने अपने तत्त्वशास्त्रीय ग्रन्थ 'दिव्य जीवन' में कहा है कि वैश्वात्मा के लिए समस्त पदार्थों में एवं वस्तुओं के समस्त संस्पर्शो में आनन्द का एक तत्त्व रहता है जिसका सर्वोत्तम वर्णन संस्कृत शब्द 'रस' के द्वारा हुआ है।[13] रस कस एक अर्थ आस्वाद के अतिरिक्त सार–तत्त्व भी हैं। इस अर्थ में रस काव्य की आत्मा है। वही सौन्दर्य का सृजक है और आनन्द का प्रदाता है। इस सौन्दर्य–तत्त्व, रस–तत्त्व या आनन्द–तत्त्व की अभिव्यक्ति की पृष्ठभूमि में श्रीअरविन्द ने सात मूल तथ्यों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है –

पद्ध आनन्द ही रस है,
पपद्ध रस समस्त पदार्थों का सार–तत्त्व है,
पपपद्ध रस विश्वात्मा के वर्धमान आनन्द की अभिव्यक्ति है,
पअद्ध सुख और दुःख आनन्द के ही परवर्ती और परिवर्तित रूप हैं,
अद्ध भयानक और विभत्स भी मूल आनन्द और रस के ही विकृत रूप हैं,
अपद्ध अतिमानसिक आनन्द में रस के परवर्ती और परिवर्तित रूपों का समावेश नहीं रहता तथा
अपपद्ध पूर्ण मुक्ति की प्राप्ति रस/आनन्द या सौन्दर्य–तत्त्व के द्वारा होती है।

इस प्रकार श्रीअरविन्द रस, आनन्द या सौन्दर्य–तत्त्व को पूर्ण मुक्ति का साधन मानते हैं। यह साधन और साध्य दोनों है। इसीलिए अतिमानसिक आनन्द में उन्होंने भयानक और विभत्स को आनन्द और रस का विकृत रूप माना है और रस को विश्वात्मा के वर्धमान आनन्द की अभिव्यक्ति कहा है। अतः श्रीअरविन्द की दृष्टि से काव्यात्मा के विमर्श को हम सौन्दर्य, रस और आनन्द के रूप में काव्य का मूल मान सकते हैं।[14] आज के भूमण्डलीयकरण के युग में हमारे जीवन में सौन्दर्य, रस और आनन्द का परिपाक शुष्क न हो जाये, इसलिए श्रीअरविन्द के आलोक में काव्य की आत्मा का जीवित रहना नितान्त आवश्यक है।

सन्दर्भ

1. श्रीअरविन्द काव्य चयन, श्रीअरविन्द, अनु0ः देवदत्त, श्रीअरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी, 2001
2. ''रसो वै सः। रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति।।''
   – तैत्तिरीय उपनिषद्, ब्रह्मानन्दवल्ली 2.7
3. लल कमल, रवीन्द्र, श्रीअरविन्द सोसाइटी, पाण्डिचेरी, द्वितीय संस्करण, 1994, पृष्ठ 281–282.
4. वही, पृष्ठ 280.
5. द सिन्थेसिस ऑफ योग, श्रीअरविन्द, श्रीअरविन्द लाइब्रेरी, न्यूयॉर्क, 1950, पृष्ठ 72
6. द फ्यूचर पोइट्री, श्रीअरविन्द, श्रीअरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी, 1953, पृष्ठ 165–169
7. वही, पृष्ठ 163.
8. वही।
9. वही, पृष्ठ 163–164.
10. वही, पृष्ठ़ 164.
11. सावित्री, श्रीअरविन्द, श्रीअरविन्द जन्मशताब्दी संस्करण, 1972, खण्ड 28–29.
12. ''रसो वै सः। रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति।।''
   – तैत्तिरीय उपनिषद्, ब्रह्मानन्दवल्ली 2.7
13. 'दिव्य जीवन', श्रीअरविन्द, शताब्दी संस्करण, 1972, खण्ड 18, पृष्ठ 108–109.
14. श्रीअरविन्द की साहित्य–चिंतना, डॉ0 शिवनाथ, कायां फाउण्डेशन, कलकत्ता, पृष्ठ 317–341.